## श्री राम-कैकेयी संवाद

चौपाई :

*** सूखहिं अधर जरइ सबु अंगू। मनहुँ दीन मनिहीन भुअंगू॥ सरुष समीप दीखि कैकेई। मानहुँ मीचु घरीं गनि लेई॥1॥

भावार्थ:

राजा के होठ सूख रहे हैं और सारा शरीर जल रहा है, मानो मणि के बिना साँप दुःखी हो रहा हो। पास ही क्रोध से भरी कैकेयी को देखा, मानो (साक्षात) मृत्यु ही बैठी (राजा के जीवन की अंतिम) घड़ियाँ गिन रही हो॥1॥

*** करुनामय मृदु राम सुभाऊ। प्रथम दीख दुखु सुना न काऊ॥ तदपि धीर धरि समउ बिचारी। पूँछी मधुर बचन महतारी॥2॥

भावार्थ:

श्री रामचन्द्रजी का स्वभाव कोमल और करुणामय है। उन्होंने (अपने जीवन में) पहली बार यह दुःख देखा, इससे पहले कभी उन्होंने दुःख सुना भी न था। तो भी समय का विचार करके हृदय में धीरज धरकर उन्होंने मीठे वचनों से माता कैकेयी से पूछा-॥2॥

*** मोहि कहु मातु तात दुख कारन। करिअ जतन जेहिं होइ निवारन॥ सुनहु राम सबु कारनु एहू। राजहि तुम्ह पर बहुत सनेहू॥3॥

भावार्थ:

हे माता! मुझे पिताजी के दुःख का कारण कहो, ताकि उसका निवारण हो (दुःख दूर हो) वह यत्न किया जाए। (कैकेयी ने कहा-) हे राम! सुनो, सारा कारण यही है कि राजा का तुम पर बहुत स्नेह है॥3॥

*** देन कहेन्हि मोहि दुइ बरदाना। मागेउँ जो कछु मोहि सोहाना॥ सो सुनि भयउ भूप उर सोचू। छाड़ि न सकहिं तुम्हार सँकोचू॥4॥

भावार्थ:

इन्होंने मुझे दो वरदान देने को कहा था। मुझे जो कुछ अच्छा लगा, वही मैंने माँगा। उसे सुनकर राजा के हृदय में सोच हो गया, क्योंकि ये तुम्हारा संकोच नहीं छोड़ सकते॥4॥

दोहा :

*** सुत सनेहु इत बचनु उत संकट परेउ नरेसु। सकहु त आयसु धरहु सिर मेटहु कठिन कलेसु॥40॥

भावार्थ:

इधर तो पुत्र का स्नेह है और उधर वचन (प्रतिज्ञा), राजा इसी धर्मसंकट में पड़ गए हैं। यदि तुम कर सकते हो, तो राजा की आज्ञा शिरोधार्य करो और इनके कठिन क्लेश को मिटाओ॥40॥

चौपाई :

*** निधरक बैठि कहइ कटु बानी। सुनत कठिनता अति अकुलानी॥ जीभ कमान बचन सर नाना। मनहुँ महिप मृदु लच्छ समाना॥1॥

भावार्थ:

कैकेयी बेधड़क बैठी ऐसी कड़वी वाणी कह रही है, जिसे सुनकर स्वयं कठोरता भी अत्यन्त व्याकुल हो उठी। जीभ धनुष है, वचन बहुत से तीर हैं और मानो राजा ही कोमलनिशाने के समान हैं॥1॥

*** जनु कठोरपनु धरें सरीरू। सिखइ धनुषबिद्या बर बीरू॥ सबु प्रसंगु रघुपतिहि सुनाई। बैठि मनहुँ तनु धरि निठुराई॥2॥

भावार्थ:

(इस सारे साज-समान के साथ) मानो स्वयं कठोरपन श्रेष्ठ वीर का शरीर धारण करके धनुष विद्या सीख रहा है। श्री रघुनाथजी को सब हाल सुनाकर वह ऐसे बैठी है, मानो निष्ठुरता ही शरीर धारण किए हुए हो॥2॥

*** मन मुसुकाइ भानुकुल भानू। रामु सहज आनंद निधानू॥ बोले बचन बिगत सब दूषन। मृदु मंजुल जनु बाग बिभूषन॥3॥

भावार्थ:

सूर्यकुल के सूर्य, स्वाभाविक ही आनंदनिधान श्री रामचन्द्रजी मन में मुस्कुराकर सब दूषणों से रहित ऐसे कोमल और सुंदर वचन बोले जो मानो वाणी के भूषण ही थे॥3॥

*** सुनु जननी सोइ सुतु बड़भागी। जो पितु मातु बचन अनुरागी॥ तनय मातु पितु तोषनिहारा। दुर्लभ जननि सकल संसारा॥4॥

भावार्थ:

हे माता! सुनो, वही पुत्र बड़भागी है, जो पिता-माता के वचनों का अनुरागी (पालन करने वाला) है। (आज्ञा पालन द्वारा) माता-पिता को संतुष्ट करने वाला पुत्र, हे जननी! सारे संसार में दुर्लभ है॥4॥

दोहा :

*** मुनिगन मिलनु बिसेषि बन सबहि भाँति हित मोर। तेहि महँ पितु आयसु बहुरि संमत जननी तोर॥41॥

भावार्थ:

वन में विशेष रूप से मुनियों का मिलाप होगा, जिसमें मेरा सभी प्रकार से कल्याण है। उसमें भी, फिर पिताजी की आज्ञा और हे जननी! तुम्हारी सम्मति है,॥41॥

चौपाई :

*** भरतु प्रानप्रिय पावहिं राजू। बिधि सब बिधि मोहि सनमुख आजू॥ जौं न जाउँ बन ऐसेहु काजा। प्रथम गनिअ मोहि मूढ़ समाजा॥1॥

भावार्थ:

और प्राण प्रिय भरत राज्य पावेंगे। (इन सभी बातों को देखकर यह प्रतीत होता है कि) आज विधाता सब प्रकार से मुझे सम्मुख हैं (मेरे अनुकूल हैं)। यदि ऐसे काम के लिए भी मैं वन को न जाऊँ तो मूर्खों के समाज में सबसे पहले मेरी गिनती करनी चाहिए॥1॥

*** सेवहिं अरँडु कलपतरु त्यागी। परिहरि अमृत लेहिं बिषु मागी॥ तेउ न पाइ अस समउ चुकाहीं। देखु बिचारि मातु मन माहीं॥2॥

भावार्थ:

जो कल्पवृक्ष को छोड़कर रेंड की सेवा करते हैं और अमृत त्याग कर विष माँग लेते हैं, हे माता! तुम मन में विचार कर देखो, वे (महामूर्ख) भी ऐसा मौका पाकर कभी न चूकेंगे॥2॥

*** अंब एक दुखु मोहि बिसेषी। निपट बिकल नरनायकु देखी॥ थोरिहिं बात पितहि दुख भारी। होति प्रतीति न मोहि महतारी॥3॥

भावार्थ:

हे माता! मुझे एक ही दुःख विशेष रूप से हो रहा है, वह महाराज को अत्यन्त व्याकुल देखकर। इस थोड़ी सी बात के लिए ही पिताजी को इतना भारी दुःख हो, हे माता! मुझे इस बात पर विश्वास नहीं होता॥3॥

*** राउ धीर गुन उदधि अगाधू। भा मोहि तें कछु बड़ अपराधू॥ जातें मोहि न कहत कछु राऊ। मोरि सपथ तोहि कहु सतिभाऊ॥4॥

भावार्थ:

क्योंकि महाराज तो बड़े ही धीर और गुणों के अथाह समुद्र हैं। अवश्य ही मुझसे कोईबड़ा अपराध हो गया है, जिसके कारण महाराज मुझसे कुछ नहीं कहते। तुम्हें मेरीसौगंध है, माता! तुम सच-सच कहो॥4॥

दोहा :

*** सहज सकल रघुबर बचन कुमति कुटिल करि जान। चलइ जोंक जल बक्रगति जद्यपि सलिलु समान॥42॥

भावार्थ:

रघुकुल में श्रेष्ठ श्री रामचन्द्रजी के स्वभाव से ही सीधे वचनों को दुर्बुद्धि कैकेयी टेढ़ा ही करके जान रही है, जैसे यद्यपि जल समान ही होता है, परन्तु जोंक उसमें टेढ़ी चाल से ही चलती है॥42॥

चौपाई :

*** रहसी रानि राम रुख पाई। बोली कपट सनेहु जनाई॥ सपथ तुम्हार भरत कै आना। हेतु न दूसर मैं कछु जाना॥1॥

भावार्थ:

रानी कैकेयी श्री रामचन्द्रजी का रुख पाकर हर्षित हो गई और कपटपूर्ण स्नेह दिखाकर बोली- तुम्हारी शपथ और भरत की सौगंध है, मुझे राजा के दुःख का दूसरा कुछ भी कारण विदित नहीं

है॥1॥

*** तुम्ह अपराध जोगु नहिं ताता। जननी जनक बंधु सुखदाता॥ राम सत्य सबु जो कछु कहहू। तुम्ह पितु मातु बचन रत अहहू॥2॥

भावार्थ:

हे तात! तुम अपराध के योग्य नहीं हो (तुमसे माता-पिता का अपराध बन पड़े यह संभव नहीं)। तुम तो माता-पिता और भाइयों को सुख देने वाले हो। हे राम! तुम जो कुछ कह रहे हो, सब सत्य है। तुम पिता-माता के वचनों (के पालन) में तत्पर हो॥2॥

***पितहि बुझाइ कहहु बलि सोई। चौथेंपन जेहिं अजसु न होई॥ तुम्ह सम सुअन सुकृत जेहिं दीन्हे। उचित न तासु निरादरु कीन्हे॥3॥

भावार्थ:

मैं तुम्हारी बलिहारी जाती हूँ, तुम पिता को समझाकर वही बात कहो, जिससे चौथेपन (बुढ़ापे) में इनका अपयश न हो। जिस पुण्य ने इनको तुम जैसे पुत्र दिए हैं, उसका निरादर करना उचित नहीं॥3॥

*** लागहिं कुमुख बचन सुभ कैसे। मगहँ गयादिक तीरथ जैसे॥ रामहि मातु बचन सब भाए। जिमि सुरसरि गत सलिल सुहाए॥4॥

भावार्थ:

कैकेयी के बुरे मुख में ये शुभ वचन कैसे लगते हैं जैसे मगध देश में गया आदिक तीर्थ! श्री रामचन्द्रजी को माता कैकेयी के सब वचन ऐसे अच्छे लगे जैसे गंगाजी में जाकर (अच्छे-बुरे सभी प्रकार के) जल शुभ, सुंदर हो जाते हैं॥4॥

दोहा :

*** गइ मुरुछा रामहि सुमिरि नृप फिरि करवट लीन्ह। सचिव राम आगमन कहि बिनय समय सम कीन्ह॥43॥

भावार्थ:

इतने में राजा की मूर्छा दूर हुई, उन्होंने राम का स्मरण करके ('राम! राम!' कहकर) फिरकर करवट ली। मंत्री ने श्री रामचन्द्रजी का आना कहकर समयानुकूल विनती की॥43॥